भारतीय साहित्य की पहचान

सम्पादक

डॉ० सियाराम तिवारी

प्रकाशक

नालन्दा खुला विश्वविद्यालय, पटना

भारतीय साहित्य की पहचान
सम्पादक : डॉ० सियाराम तिवारी

प्रकाशक :
नालन्दा खुला विश्वविद्यालय
तीसरा तल, बिस्कोमान भवन,
पश्चिमी गाँधी मैदान, पटना–800 001

© प्रकाशन-तिथि से प्रथम पाँच वर्षों तक
नालन्दा खुला विश्वविद्यालय, पटना
एवं तत्पश्चात् सम्पादक ।

प्रकाशन-तिथि : प्रथम संस्करण, अप्रील 2009,
पाँच सौ प्रतियाँ

मुद्रक :
विजयश्री ऑफसेट प्रिन्टर्स
रोड नं० 13बी, न्यू बहादुरपुर
(मारवाड़ी कॉलोनी), पटना-800 016

मूल्य : 550.00

BHARTIYA SAHITYA KI PAHACHAN
Edited by : Dr. Siyaram Tiwari
Published by : Nalanda Open University, Patna
First edition, April, 2009
Price : 550.00

कोंकणी-साहित्य

◆ डॉ० रवीन्द्रनाथ मिश्र

◆ डॉ० सु० म० तडकोडकर

कोंकणी भाषा की मातृभूमि गोवा है। गोवा को 'गोमंत', 'गोमांचल', 'गोवापुरी', 'गोपकापुर', 'गोपकपट्टण' आदि नामों से भी जाना जाता है। इसे हिंदी में गोवा, मराठी में 'गोवे' और कोंकणी में 'गोंय' कहते हैं।

महाराष्ट्र के ठाणे, रत्नागिरी, सावंतवाडी एवं निकटवर्ती अन्य जनपदों जैसे गोवा, कारवाड़, हल्लियाल, सुपा तालुका, उत्तर कर्नाटक आदि भू-भागों में किंचित् भिन्नता के साथ कोंकणी मातृभाषा के रूप में बोली जाती है। इसी प्रकार कर्नाटक, केरल और तमिलनाडु के छोटे-बड़े नगरों में भी कोंकणीभाषी निवास करते हैं। मुंबई में कोंकणी बोलनेवालों की संख्या भारत के अन्य नगरों की अपेक्षा अधिक है। जार्ज ग्रियर्सन, जूल्स ब्लोक, स्टेनकोनो, रायबहादुर वी० पी० चह्वाण, सुमित्र मंगेश कत्रे, सु० बा० कुलकर्णी, ना० गो० कालेलकर आदि यूरोपीय एवं भारतीय भाषावैज्ञानिकों ने कोंकणी को स्वतंत्र आर्यभाषा माना है। कोंकणी भाषा ने अब इतनी प्रगति कर ली है कि इसके साहित्यकार पद्मभूषण रवीन्द्र राजाराम केलेकरजी को 2004 का ज्ञानपीठ पुरस्कार प्रदान किया गया।

कोंकणी देवनागरी, रोमन, कन्नड़ और मलयालम लिपियों में लिखी जाती है। इन लिपियों का प्रभाव अलग-अलग क्षेत्रों में है। क्षेत्रगत प्रभाव के कारण कोंकणी भाषा के विविध रूप मिलते हैं, जैसे रत्नागिरी कोंकणी, दक्षिण कर्नाटक कोंकणी, केरल कोंकणी, गोवा में हिन्दुओं और ईसाइयों की कोंकणी आदि। सासण्टी, केरली, कोडियाळी, कारवाडी, बारदेशी, मंगलूरी और अंत्रुजी, ये कोंकणी की सात बोलियाँ प्रचलित हैं। इनमें से मंगलूरी, केरली, कारवाडी और कोडियाळी बोलियों में लिखित साहित्य की जानकारी प्राप्त नहीं होती, केवल अंत्रुजी, सासण्टी और बारदेशी बोलियों के विषय में ही जानकारी मिलती है जिनका परिचय इस प्रकार है–

अंत्रुजी बोली–यह गोवा की फोंणे, कवळे, बोरी, सावडर्डे, कुडचडे, साड्गें, सावईवेरे, वळवई, मार्शल, शिरोडे आदि भू-भागों की भाषा थी जो कि पुर्तगीज शासन से अल्प काल तक मुक्त थे। उक्त भू-भागों में बोली जानेवाली अंत्रुजी

बोली अत्यंत मधुर है जिसे मानक भाषा का सम्मान प्राप्त है। कोंकणी के कई महत्त्वपूर्ण ग्रंथ इसी बोली में प्रकाशित हुए हैं।

सासण्टी बोली : इस भाषा का भू-भाग पणजी के दक्षिण जुवारी नदी के उस पार तक आता है। पोर्तुगीजों ने सासण्टी का क्षेत्र मडगाँव, बाणावली, कुडतरी, कुंकळळी, नावेली आदि को माना। यहाँ विभिन्न सम्प्रदायों के ख्रिस्ती धर्मप्रचारक आपस में ही लड़ते थे। ये एक-दूसरे के ख्रिस्त मंदिरों को जला देते थे। इस अवस्था में कोंकणी में लेखन, वाचन एवं भाषण करनेवालों की क्या दशा होती होगी, यह सहज ही अनुमेय है। यहाँ का भयग्रस्त समाज कोंकणी का अध्ययन छोड़कर नाममात्र के लिए धार्मिक गीतगायन में ही रुचि लेने लगा। स्वर्ग, नक्षत्र जैसे विषय लेकर कोंकणी के अस्तित्व को कायम रखना यहाँ एक प्रकार से धार्मिक कार्य हो गया। इटालियन पद्धति एवं लैटिन रीति का आधार लेकर पाश्चात्य संगीत के कोंकणी पदबंध बनाये गये। इस प्रदेश में डेढ़ सौ वर्षों तक यही परंपरा चलती रही। इसी बीच 1822 ई० में पोर्तुगाल शासन ने बंधनरहित जीवन-यापन पर जोर दिया। इस लोकतंत्रात्मक विचारधारा का लाभ कोंकणी भाषा एवं साहित्य को भी मिला और माण्डो नामक कोंकणी पदबंध की रचना हुई। 1854 ई० से माण्डो ने सम्पूर्ण कोंकणी समाज में तहलका मचा दिया। कुडतरी-माकझन के निवासी लिगोरियो-द-कॉश्त (1821-1919 ई०), नावेली के बहुचर्चित कार्लुश त्रिनदाद दियश (1854-1890 ई०), आर्नाल्द-द-मिनेजिश (1863-1917 ई०) तथा तोर्कात-द-फिगरैदु (1876-1948 ई०) आदि रचनाकारों ने माण्डो के द्वारा एक नये इतिहास की रचना की। दुर्भाग्य से अब उस प्राचीन कोंकणी का मूल स्वरूप नहीं रहा। पोर्तुगीज भाषा के प्रभाव से इस सासण्टी बोली के स्वरूप में काफी परिवर्तन हुआ। उचित व्याकरण के अभाव के कारण इसमें सुचारु ढंग से गद्य-लेखन नहीं हो सका। यही कारण है कि सासण्टी भाषा केवल भाषण एवं बातचीत तक सीमित रह गयी। इसकी तुलना में बारदेशी बोली ने अपनी अस्तित्व-रक्षा करते हुए अपने-आपको समृद्ध भी किया।

बारदेशी बोली—गोवा की राजधानी पणजी के उत्तर में पिळर्ण, पर्वरी, पर्रा, म्हापसा, कोलवाळ आदि के आसपास के भू-भाग को बारदेश कहा जाता है। सन् 1684 ई० में आल्बीर के नियमानुसार कोंकणी के प्रयोग करनेवाले को मृत्यु दण्ड हो सकता था। इस नियम के कारण बारदेश में कोंकणी में बातचीत, लिखाई-पढ़ाई आदि का कार्य ठप्प-सा हो गया। इसके कई कारण थे जिनमें प्रमुख कारण यह था कि यह प्रदेश ख्रिस्ती धर्ममत के फ्रान्सिस्कन सम्प्रदाय का अंग था। इस सम्प्रदाय ने स्थानीय भाषाओं के विकास में बहुत कम रुचि दिखायी। इसके अतिरिक्त आभिजात्य कोंकणी समाज के विभिन्न घटकों ने भी कोंकणी की उपेक्षा की। ये लोग अपने को पोर्तगीज

कार्यालयों में वरिष्ठ पदों पर बैठे फ्रान्सिस्कन अधिकारियों के साथ तालमेल बैठाना चाहते थे। जो लोग ऐसा नहीं कर सके, वे मुंबई, पुणे आदि शहरों की ओर प्रस्थान कर गये। वहाँ की आधुनिकता, स्वच्छ वातावरण तथा अँगरेजी भाषा के प्रति प्रेम ने इन लोगों को आकर्षित किया। कोंकणी घरेलू भाषा के रूप में अपना अस्तित्व बचाये रही।

कुछ समय बाद बारदेश बोली क्षेत्र के मुंबई-निवासी कोंकणीभाषियों ने अपने गौरवपूर्ण अतीत को याद किया। अस्नोड ग्रामवासी प्रोफेसर एदुआर्द ब्रुन-द-सौज (1836-1905 ई०) ने अपनी क्षमता का परिचय देते हुए इतालियन महाकवि दान्ते एलिघिएरि तथा पोर्तुगाली कवि कामॉयश का अनुकरण कर 'एव आनी मेरी' नामक महाकाव्य-सदृश कृति की रचना की। उन्होंने फ्रेंच-लेखक अलेक्जैंडर ड्युमा को आदर्श मानकर 'खुशालपणाचो घराबो आनि पंचतीस कुँवर' और 'क्रिस्तांव घराबो' नामक दो कोंकणी उपन्यास लिखे। उनकी 'सर्गाचो ठोवो' पुस्तक उनकी मृत्यु के उपरान्त 1925 ई० में प्रकाशित हुई। कोंकणी की एक नियतकालीन पत्रिका 'उदेन्तेचें साळिक' (1898 ई०) भी उन्होंने प्रकाशित किया। प्रारम्भ में यह मासिक थी किन्तु बाद में पाक्षिक हो गयी। कोंकणी का प्रथम दैनिक समाचारपत्र 'साञ्जेचें नकेत्र' 1907 ई० में मुंबई से प्रकाशित हुआ जिसके सम्पादक बी० एफ० काबाल थे। इसी तरह 1932-33 ई० में आन्तोनियु ह्विन्सेन्त-द-क्रुज और जुआँव लाजारस-द-सौजा के सम्पादकत्व में क्रमश: 'कोंकणी बुलेटिन' और 'गोवन ऑब्जर्बर' नामक दो दैनिक पत्र प्रकाशित होने लगे।

यहाँ ध्यातव्य है कि इस समय कोंकणी की भाषिक गतिविधि गोवा में नहीं, वरन् मुंबई में केन्द्रित थी। इसी समय 1914 ई० के आसपास कराची से पादरी लुदोबिक परेरा (1881-1936 ई०) के संपादकत्व में 'रोटी' शीर्षक से एक कोंकणी पत्रिका प्रकाशित होने लगी थी। यह अँगरेजी के 'रीडर्स डाइजेस्ट' की ही भाँति थी। इस समय एक तरफ कोंकणी आंदोलन जोर पकड़ने लगा था तो दूसरी तरफ कोंकणी पश्चिमी भाषाओं का अनुकरण कर बिगड़ने लगी थी। 'आव मारिया' (1919 ई०), 'द गोवा मेल' (1919 ई०), 'द गोवा टाइम्स' (1930 ई०) आदि पत्रों के द्वारा कोंकणी पर पड़ रहे पाश्चात्य प्रभावों की जानकारी प्राप्त हुई। यहीं पर 'वावराड्यांचो ईश्ट' (1933 ई०) एवं 'उदेन्तेचें साळिक' (1946 ई०) पत्रिकाएँ कोंकणी की भूमि से जुड़कर यहाँ के जनमानस को कोंकणी की संस्कृति और अस्मिता की पहचान कराने में जुटी रहीं। कोंकण समाज को उनके इतिहास की जानकारी देने लगी। इन्हीं पत्रिकाओं से प्रेरणा लेकर नया लेखक मंडल अपने लेखन-कार्य को सँवारता रहा। फिर भी, इनमें भारतीयता की भावना गायब होती हुई दिखायी देने लगी। इस समय शणै गोंयबाब ने कोंकणी की अंत्रुजी बोली में पाश्चात्य नाटक-साहित्य का अनुवाद करके यह सिद्ध कर दिया कि कोंकणी भाषा में संसार भर की रचनाओं का सहज, सरल एवं स्वाभाविक रूप से अनुवाद किया जा सकता है।

इस समय बारदेश का कोंकणी समाज काव्य-रचना करने लगा था। कोंकणी के अस्तित्व को बनाये रखने की दिशा में फ्रान्सीश्क-द-सौज, जुवावं लुइस कार्वाल्य एवं बेनांदिन एवारिश्तु मेन्दिश का योगदान महत्त्वपूर्ण है। यह सही है कि कविता राष्ट्रीय स्तर की नहीं थी, फिर भी, इस समय की काव्य-रचना ने कोंकणी-साहित्य को आधार प्रदान किया। गोवा की बारदेश बोली में बँधी हुई कोंकणी ने संसार को एक नये प्रकार के नाटक तियात्र से परिचित कराया। इसका श्रेय लुकस रिबैरो को जाता है जिन्होंने एक इतालियन नाटक मंच को अपनी सेवा देते हुए सन् 1892 ई० में एक नये प्रकार का नाटक लिखा और उसे प्रदर्शित किया। इस कार्य में इन्हें साश्टी बोली से संबंधित दो नाटक-लेखकों ने सहयोग दिया। इनमें राय गाँव के निवासी कायतान फेर्नान्दिश और आगोश्तिन्यु फेर्नान्दिश ने तियात्र को लोकप्रिय बनाने में अत्यधिक परिश्रम किया। कोंकणी के अस्तित्व को बनाये रखने के लिए इस प्रकार की कोशिश उस समय की माँग थी। गोवा में तियात्र लगभग सौ वर्षों तक बड़ा लोकप्रिय रहा और आज भी मनोरंजन की दृष्टि से इसकी लोकप्रियता कुछ बनी हुई है। नाटक के साथ-साथ अन्य विधाओं में भी रचना हुई। एदुआर्दु ने 'किरिस्ताँव घराबो' शीर्षक उपन्यास लिखकर एक आदर्श प्रस्तुत किया। लिबेराल फेर्नान्दिश, सेबाश्तियावं साल्बादोर-द-जेजूस दियश, आलेयश कायतान जुजे फ्रान्सिश्क, जुवावं कायतान फ्रान्सिश-द-सौज, एदुआर्द ब्रून-द-सौज, फ्रान्सिश्क पाश्कुआल फेर्नान्दिश, लारन्शियु दांतश-इ-सौज, जे० जे० अं० वि० ब्रीतु आदि कोंकणी भाषा को सशक्त एवं समृद्ध बनाने के लिए कटिबद्ध रहे। फलतः कोंकणी में कविता, नाटक, उपन्यास, तियात्र जैसे साहित्य की भरपूर रचना होने लगी।

अब हम कोंकणी भाषा के आंदोलन की व्यापकता में न जाकर कोंकणी की विभिन्न विधाओं में हुए लेखन पर प्रकाश डालना समीचीन समझते हैं।

काव्य

कोंकणी-साहित्य में अन्य भाषाओं की भाँति काव्य-रचना की लम्बी परम्परा रही है। गोवा में पुर्तगालियों के आने के पूर्व कविता लिखी जाती थी। चौदहवीं शताब्दी के नामदेव ने कोंकणी में काव्य-रचना की थी। कृष्णभट्ट बांदकार ने स्फुट काव्य रचे। सोलहवीं सदी में गाश्पार-द-सा मिगेल ने यीशु के वधस्तंभारोहण पर करुण काव्य लिखा था। तेरहवीं शताब्दी में यीशुमाता मेरी के क्रंदन पर आधारित लातिन भाषा में लिखे हुए काव्य का सत्रहवीं सदी में फादर पाश्कोल डायस ने कोंकणी में अनुवाद किया था। काशीनाथ श्रीधर नायक 'बयाभाव' (1899-1983 ई०) ने 'सड्यावेलीं फुलाँ' (घाटमाथे पर खिले हुए पुष्प) एवं 'सुकृत फळाँ' (सुकर्मों का

फल) दो कविता-संग्रह प्रकाशित किये। इनकी कविताओं में मूलतः प्रकृति, कोंकण प्रदेश एवं मानव-सम्बन्धों का चित्रण किया गया है। आदेवुदातु बार्रेतु (1905-1937 ई०) ने भी कोंकणी में प्रसंग विशेष पर काव्य-रचना की। तदुपरान्त आनंदयात्री बाळकृष्ण भगवन्त उपाख्य बाकीबाब बोरकार (1910-1984 ई०) ने भी संगीतमय 'पायजणाँ' (नूपुर) के माध्यम से काव्यरसिकों के लिए अनुपम रचना प्रस्तुत की। भारत सरकार ने उन्हें पद्मश्री उपाधि से विभूषित किया। बोरकार की 1980 ई० में प्रकाशित एक अन्य कृति 'सासाय' (परमेश्वर का अस्तित्व) की कविताएँ कुछ हद तक अंतर्मुखी हैं। उनकी 'वासवदत्ता', 'पैगम्बर', 'भजगोविन्दम्' (1973 ई०) आदि रचनाएँ प्रशंसनीय हैं। रामचंद्र नारायण नायक (1901-1982 ई०) ने यीशु के गिरिप्रदेश से दिये हुए संदेश, रवीन्द्रनाथ ठाकुर की 'गीतांजलि' एवं अँगरेजी 'स्ट्रे बर्ड्स' जैसे काव्यों का अनुवाद किया है। ये सभी स्वभावतः छायावादी कवि थे।

लोककवि मनोहरराय सरदेसाय (1925 ई०) ने आधुनिक कविता की नींव डाली। उनका 'आयज रे धोलार पडली बडी' (1961 ई०, आज बज उठा ढोल) ने गोवा में सामाजिक-सांस्कृतिक जागरण का स्वर मुखरित किया। तदुपरान्त आप फ्रांस की राजधानी पेरिस चले गये। वहाँ निवास करते हुए इनके मन में देशप्रेम की भावना उमड़ पड़ी। उस समय की लिखी हुई इनकी सम्पूर्ण कविताएँ 'गोंया तुज्या मोगा खातिर' (गोवा तुम्हारे वात्सल्य के कारण) काव्यसंग्रह में संगृहीत हैं। इन दो काव्यसंग्रहों ने मात्र कोंकणी-प्रेमियों को ही नहीं अपितु संपूर्ण गोवावासी समाजवादियों को नयी दृष्टि प्रदान की। सन् 1964 ई० में प्रकाशित 'जायात जागे' (जागृत हो) काव्यसंग्रह की कविताओं में दलितों और पीड़ितों की मानसिक यंत्रणा, भावी कोंकण समाज की संरचना और स्वरूप, गोवा-मुक्ति की कामना का आशाजनक परिणाम, स्वार्थी लोगों का उदय, बहुजन हिताय के स्थान पर स्वयं के लाभ की संकीर्ण भावना, विधानसभा की पवित्र कार्यवाही को मजाक बनाना, मंत्री-परिषद् का अस्थायित्व आदि चित्रित हैं। साहित्य अकादेमी के पुरस्कार से सम्मानित सरदेसाय ने इस पृष्ठभूमि पर 'हुंदराची सभा' (चूहों की सभा) नाम से एक विडम्बनात्मक काव्य लिखा। सन् 1970 ई० के दौरान कतिपय कारणों से इनका व्यक्तित्व अंतर्मुखी होने लगा। कुछ समय बाद इनका 'जायो जुंयो' काव्यसंग्रह आया जिसने एक नवीन सौंदर्य की सृष्टि की। इस शीर्षक की इतनी धूम मची कि सरकारी दुकानों को भी यही नाम दिया गया। कविता का सहज, शांत एवं स्निग्ध स्वरूप 1978 ई० में प्रकाशित इनके 'पिसोळी' काव्यसंग्रह में देखने को मिलता है। काव्य-रचना को नया मोड़ देते हुए इन्होंने बाल-साहित्य का भी सर्जन किया। इन्होंने कथाकाव्य 'भांगराची कुराड' (सुवर्ण की कुल्हाड़ी) और 'खुरसाची काणी' (क्रास की कहानी) जैसे प्रसिद्ध

काव्यसंग्रह प्रकाशित किये। इनकी कविताओं के अनुवाद अन्य भाषाओं में हुए। मनोहरराय सरदेसाय काव्य-जगत् में प्रसिद्धि के उच्च शिखर पर पहुँच गये।

जिस समय मनोहरराय सरदेसाय की कविताओं की धूम मची थी उसी समय गोवा के पीड़ित-दलित तथा कृषक-समाज की वेदना को मुखरित करनेवाले कवि र० वि० पंडित (1917-1990 ई०) का काव्य के क्षेत्र में पदार्पण हुआ। पंडित ने कोंकणी-कविता को एक नया आयाम दिया जिसका संदर्भ इस आलेख में अन्यत्र आया है। वे एक धनवान् भाटकार (भूपति) थे परन्तु उन्होंने भूमिहीनों की वेदना, किसानों के आक्रोश एवं गरीब इंसान की पीड़ा को अच्छी तरह जाना और समझा। 26 जनवरी 1963 ई० को उनके 'म्हजे उतर गावड्याचें', 'उरतलें तें रूप धरलें', 'धर्तरेचें कवन', 'चन्द्रावल', 'आयलें तशें गायलें' नामक पाँच काव्यसंग्रह प्रकाशित हुए। उनकी कविताओं का सार्वजनिक पाठ होने लगा। उनकी अद्भुत काव्य-रचना को देखकर लोग आश्चर्य-चकित रह गये। एक भाटकार असहाय जनों की वाणी बनकर जी रहा था। गोवा को महाराष्ट्र में मिलाने हेतु हुए जनमत-संग्रह में पंडितजी ने महाराष्ट्र से अलग गोवा के अखण्ड अस्तित्व का उद्घोष किया। इस कार्य में सहायता के निमित्त धन जुटाने के लिए उन्होंने अपनी जमीन बेचकर कोंकणी-प्रेम का परिचय दिया। उनके इस त्याग की लोगों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की। भारत सरकार ने उन्हें 'पद्मश्री' से सम्मानित किया। पंडितजी को साहित्य अकादेमी के पुरस्कार से भी नवाजा गया। कालान्तर में उनके 'रेवेंतली पावलाँ' (1969 ई०), 'मोगाचें आंवडे' (1975 ई०) और 'दर्या गाजोता' (1977 ई०), ये तीन काव्यसंग्रह प्रकाशित हुए। पंडितजी की कविताएँ भारतीय एवं इतर भाषाओं में अनूदित हुईं और उन पर पीएच० डी० स्तर का शोधकार्य भी किया गया। उन्हें 'कॉमनवेल्थ नेशन्स' का प्रसिद्ध पुरस्कार भी प्राप्त हुआ। पंडितजी का कोंकणी-काव्यजगत् में पदार्पण समुद्र की लहरों के समान हुआ जो शांत होने के बाद भी हिलकोरें लेता रहा।

वामन सरदेसाय 'अभिजित' (1923-1994 ई०) ने महत्त्वपूर्ण कोंकणी-काव्य की रचना की। इनकी कविताएँ इनके जीवन-दर्शन की अभिव्यक्ति हैं। भारत सरकार ने इन्हें 'पद्मश्री' की उपाधि प्रदान की।

छायावाद एवं समाजवाद की प्रवृत्तियों के मिश्रित स्वरूप के दर्शन हमें गजानन रायकर के 'बनवड' एवं 'सुंवारी' काव्य-संग्रहों में देखने को मिले हैं। इनकी कविताओं में बाकीबाब बोरकार का आनंदभाव, समाजवाद का घोष, प्राकृतिक सौन्दर्य, कोंकणी शब्दों का सुरम्य नाद, ये सब एक साथ दिखायी पड़ते हैं। इन्होंने कभी कोंकणी को निषिद्ध मानकर मराठी में लिखा तो कभी कोंकणी में भी लिखा और

मराठी से बेहतर लिखा। जब ये कोंकणी में प्रवचन करते हैं तो श्रोता मंत्रमुग्ध होकर सुनते हैं। इनमें काव्यगायन की अप्रतिम प्रतिभा है।

र० वि० पंडित की परम्परा के सशक्त हस्ताक्षर नागेश करमली जी (1933 ई०) हैं। इनकी सामाजिक एवं राजनीतिक विचारधारा की कविताएँ 1965 ई० से ही पाठकों को आंदोलित कर रही थीं लेकिन अपने सरल, सहज एवं संकोची स्वभाव तथा आलस्य के कारण इन्होंने अपनी कविताओं के प्रकाशन में रुचि नहीं दिखायी। 'जोरगत' एवं 'सांवार' (1979 ई०) काव्यसंग्रहों के प्रकाशन से इनका कवि-व्यक्तित्व प्रकाश में आया। कोंकणी-कविता में विचारों की उग्रता एवं जागरण का संदेश तथा सांस्कृतिक परम्परा और समाजवाद का अनुपम सामंजस्य नागेश करमली के 'वंशकुळाचें' काव्यसंग्रह में देखने को मिलता है। ये गोवा-मुक्ति-आंदोलन के स्वतंत्रता-सेनानी थे तथा जीवन एवं समाज की पीड़ा को इन्होंने अच्छी तरह देखा था। आपको साहित्य अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

पाण्डुरंग भांगी (1923-2001 ई०) ने कोंकणी-कविता को दार्शनिक आयाम दिया। आत्मपरीक्षणात्मकता, सूक्ष्मता एवं गूढ़ार्थ का परिशोधन इनकी कविता-रचना के विशेष तत्त्व माने जाते हैं। जीवन के विविध प्रसंगों में व्यक्ति का मन डिगने लगता है। कवि का मानना है कि उस समय हमें आत्मपरीक्षण का आधार लेना चाहिए। साहित्य अकादेमी से पुरस्कृत भांगी के 'दिस्टावो' (दर्शन) एवं 'अदृष्टाचे कळे' अदृश्य कलियाँ) दो काव्यसंग्रह 1982 ई० में प्रकाशित हुए।

कवि शंकर पाण्डुरंग रामाणी (1923-2003 ई०) मराठी एवं कोंकणी-कविता के सशक्त हस्ताक्षर माने जाते हैं जिन्होंने पन्द्रह वर्ष की आयु से कविता लिखना शुरू किया था। प्रकृति, जीवन एवं दर्शन इनकी कविता का मूल विषय है। 'जोगलांचे झाड', 'निळें, निळें ब्रह्म', 'ब्रह्मकमल' एवं 'निरंजन', ये तीन काव्यसंग्रह प्रकाशित हुए। 'निळें निळें ब्रह्म' काव्यसंग्रह पर इन्हें 1996 ई० में साहित्य अकादेमी से और 2002 ई० में 'गोमंत शारदा पुरस्कार' से पुरस्कृत किया गया। कवयित्री विजयाबाय सरमळकर (1924 ई०) हिन्दी की महादेवी वर्मा की भाँति नारी-व्यथा की करुण कथा को व्यक्त करती हुई काव्य-रचना में निरत हैं।

पुडलिक नारायण नायक (1952 ई०) का 'गा आमीं राखणे' संग्रह काव्य का श्रेष्ठ उदाहरण प्रस्तुत करता है। इसमें समाजवाद के दाहक एवं प्रबल स्वरूप को व्यक्त किया गया है। इसके साथ ही गोवा के सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन की पीड़ा का व्यापक एवं सूक्ष्म स्तर पर मर्मस्पर्शी चित्रण हुआ है।

पंढरीनाथ लोटलीकार के काव्यसंग्रह 'आमची भूंय' (1965 ई०) की कविताएँ

देशभक्ति से परिपूर्ण हैं। इनकी भाषा शुद्ध एवं प्रांजल है। साहित्य अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित चाफ्रा-द-कॉश्त और जे० बी० मोरायश की कविताएँ क्रमशः 'सोश्याचे कान' (1977 ई०) एवं 'नवी होकल' और 'भितरलें तूफान' (1984 ई०) काव्यसंग्रहों में संकलित हैं। युसुफ अ० शेख के 'गाँठी' (1984) काव्यसंग्रह की कविताएँ आत्मदर्शन का आईना बनकर उभरीं। भिकाजी घाणेकर एवं जेस फर्नाण्डिस का 'सोतेर बारेंतु' (1942 ई०), पादरी पेद्रु जे लोबु का 'स्तोत्रा' (1981 ई०) रामप्रभु चोडणेकार का 'निरंजन' (1984 ई०) स्वामी आनंद आगियार का 'चाफी' तथा 'किर्णा' (1985 ई०) महत्त्वपूर्ण काव्यसंग्रह हैं।

सुरेश बोरकार (1938 ई०) ने अपनी गूढ़ दार्शनिक कविताओं से कोंकणी-साहित्य को समृद्ध किया। इनका 1985 ई० में प्रकाशित 'वज्रथिका' काव्यसंग्रह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसी कड़ी में पेशे से वकील परंतु मूलतः कथाकार एवं पत्रकार उदय भेम्ब्रे ने 1986 ई० में प्रकाशित 'चान्याचे राती' काव्यसंग्रह में प्रेम और सौन्दर्य को एक नया स्वरूप प्रदान किया। गोवा के प्राकृतिक सौन्दर्य के साथ-साथ यहाँ की अव्यवस्थित जीवनप्रणाली को चित्रित करनेवाली कविताओं के दो संग्रह 'पाकळ्यो' (तोमाझिन कार्दोझ) और 'जैत' (प्रभाकर तेंडुलकर) 1986 ई० में प्रकाशित हुए। इसी वर्ष फादर-द-सा ने 'आडांबे' जैसा अप्रतिम काव्यसंग्रह कविता-प्रेमियों को दिया। कोंकणी-काव्ययात्रा में फादर प्रताप नायक के 'जीवितांतली घडितां' (1983 ई०) और 'काजुले' (1984 ई०) स्वामी सुप्रिय का 'काळिज' (1984 ई०) एवं जे० वी० सिक्वेरा के 'काळजाचे उमाळे' (1987 ई०) और 'एक सपन अधुरें' (1988 ई०) दियोगु मार्कुस फर्नाण्डिस का 'गोंय म्हजें हाँसता' काव्यसंकलन प्रकाशित हुए। रामकृष्ण जुंवाकर ने इस दौर में धार्मिक काव्यलेखन-परंपरा की शुरुआत करते हुए 1974 ई० में 'पुंजायिल्लो पाकळयो' काव्यसंकलन प्रकाशित किया जिसमें गॉमिश की कविता भी संगृहीत है। कोंकणी-शब्दों के चयन एवं विन्यास के फलस्वरूप 1984 ई० में प्रकाशित जुंवाकर का 'सुस्कारे' काव्यसंग्रह गद्यात्मक हो गया। वस्तुतः यह किसी शब्दकोश के निर्माण के लिए अधिक उपयुक्त हो सकता है।

रघुनाथ विष्णु पंडित, करमली, रायकर, नायक आदि कवियों की अगली शृंखला में प्रकाश पांडगांवकार (1948 ई०) का नाम आता है। कवि अपने आक्रोश, क्षोभ, टीस और वेदनाभरे भावों को अत्यंत सहज एवं सयंमित रूप से व्यक्त करता है। इनकी रचनाओं में दीपक की लौ के समान दाहकता है। पांडगांवकर का मानना है कि नागरी जीवन की सभ्यता मानव को निगल रही है। पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति भारतीय सभ्यता और संस्कृति का चर्वण कर रही है। आज मानव

अश्वत्थामा बन गया है। मनुष्य स्वयं के बोझ से दब रहा है, वह दूसरों को क्या सहायता दे सकता है ? कवि के ये विचार उनके क्रमशः 1976 ई० एवं 1985 ई० में प्रकाशित 'उजवाडार्ची पावलां', 'वास्कोयन' तथा 'हांव मनीस अश्वत्थामो' काव्यसंकलनों की कविताओं में अभिव्यक्त हुए हैं। इन संग्रहों ने कोंकणी-कविता का मान बढ़ाया। फलतः इन्हें साहित्य अकादेमी के पुरस्कार से नवाजा गया।

प्रेम और प्रकृति के सुकुमार कवि रमेश भगवंत वेळुस्कार (1947 ई०) के 'मोरपांखां', 'माती' (1983 ई०), 'सांवुलगोरी' (1989 ई०), 'आंगणी नाचता मोर मोरया' एवं 'हिरण्यगर्भ', पाँच काव्यसंग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। 'सांवुलगोरी' काव्यसंग्रह पर आपको साहित्य अकादेमी पुरस्कार मिला है। वेळुस्कर की प्रारंभिक कविताएँ राष्ट्रीयता, रोमानी भावों एवं गोवा की नैसर्गिक सुषमा से सजी हैं जिनमें नाद, लय, संगीत और बिम्ब की भरमार है। 'माती' संग्रह की अधिकांश कविताएँ गोवा की मिट्टी से जुड़ी हैं। इनकी बाद की कविताओं में समकालीनता का स्वर प्रमुख है। रमेश वेळुस्कर के समकालीन और साहित्य अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित माधव बोरकार (1954 ई०) के 'वोतांतल्यों सांवळयो' में 'उजवाडाचो रुख', 'पर्जळाचें दार', 'यमन' एवं 'अव्यक्ताचे गाणें', इन पाँच काव्यसंग्रहों में कोंकणी-कविता का बहुरस माधुर्य छिपा है। इनमें भाव, विभाव एवं अनुभाव के रमणीय दर्शन होते हैं। इसी कड़ी में यशवंत केळेकार का 'पुंजायिल्ली ओंवळां', सुहास दलाल का 'उगाळो', नीला तेलंग का 'काळजाची भरती', आर० रामनाथ का 'मळबरंगमाची' आदि प्रसिद्ध काव्यसंग्रह प्रकाशित हुए।

यहाँ कुछ ऐसे कोंकणी-कवियों के नाम उल्लिखित किये जा रहे हैं जिनमें से कुछ के तो काव्यसंग्रह प्रकाशित हैं, शेष कवियों की कविताएँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं। ऐसे कवियों में नरेन्द्र बोडके ('सूरंगा वळेसर'), सुदेश लोटलीकर ('पैस'), संजीव वेरेंकार ('भावझुम्बर'), आलेक्स गोयश ('काजुले'), जॉन आगियार ('जीण') भरत नायक ('मन मन'), दामोदर व्यंकटेश कामत ('जनेल'), काशीनाथ शाम्बा लोलयेंकार ('काशी म्हण्टा') आदि कवियों के काव्यसंग्रह तथा नयना सुर्लकार, माधवी सरदेसाय, सोयरु वर्दे, सिरिल सिक्वेरा, फादर बोतेल्यु, सिल्वेस्टर-डि-सौझा, रॉन ल्युईस, एडवर्ड नाझरेथ, जेरेल्ड पिन्तु, फ्रांसिस सालदान्ज्य, आम्ब्रोज डी सौझा, सिन्तिया क्वाद्रुस, फादर मोरेन-डि-सौझा, बेनांदिनो इव्हारिस्तु मेंडिस, शंकर पेरुळेकार, अशोक भोंसुलो, ॲन्थनी कोरैय पियेंकार, परेश नरेंद्र कामत, अशोक काणेकार, गजानन जोग, नारायण देशाय, निलबा खाण्डेकार आदि कवियों की कविताएँ प्रकाशित हुईं और आज भी हो रही हैं।

कोंकणी के प्रमुख प्रयोगशील कवियों में काशीनाथ शाम्बा लोलयेंकार, अरुण

साखरदाण्डे ('एका झाडाक घर जाय,' 'कावकयाचें स्राद्द', 'मोग किनारीं') एवं सु० म० तडकोड ('एक कृश्णकळी', 'पांयजेल') इन तीन कवियों के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

कोंकणी में विपुल काव्यसंग्रह के प्रकाशन की परम्परा नहीं रही है, फिर भी महत्त्वपूर्ण कार्य हुए हैं। संपादित काव्यसंग्रहों की कड़ी में 'रत्नांहार' दो भाग (संपादक–रघुनाथ विष्णु पंडित), 'कोंकणी कविता' (संपादक–आनंदयात्री बालकृष्ण भगवंत यानी बाकीबाब बोरकार), 'स्वतंत्र गोंयातली कोंकणी कविता' (संपादक–मनोहरराय लक्ष्मणराव सरदेसाय), 'तीन दसकाँ' (सम्पादक–चन्द्रकान्त केणी), 'युवांकुर' आदि संकलन आये। इस दिशा में हेमा धुमटकार-नायक ने भी एक ऐसा प्रयास किया और 'अप्रूप' काव्यसंग्रह का संपादन किया।

उपर्युक्त कवियों के अतिरिक्त पुरुषोत्तम सिंगबाल, प्रकाश थळी, यशवंत पालेकर आदि कतिपय अन्य प्रतिभा-सम्पन्न कोंकणी-कवियों के काव्यसंग्रह प्रकाशित तो नहीं हुए लेकिन इनकी कविताएँ 'समकालीन भारतीय साहित्य', 'गोमंतभारती', 'कुळागर', 'राष्ट्रमत', 'ऋतु' आदि प्रसिद्ध पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती हैं।

कहानी

कोंकणी के कहानी-साहित्य की झलक दिखाने के पूर्व यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि कोंकणी में दो शब्द प्रचलित हैं– 'कहानी' एवं 'कथा' और दोनों में अंतर माना जाता है। जिसमें दंतकथा अथवा लोकसाहित्य प्रतिबिम्बित होता है उसे कहानी की संज्ञा दी जाती है और जिसमें आधुनिक साहित्य-प्रणाली के अनुसार लघुकथा जैसी रचना होती है उसे कथा कहा जाता है। वि० स० सुखठणकार, लुसियु रुद्रिगीश, जॉर्ज आतायद लोबु आदि लेखकों ने अँगरेजी में कोंकणी कहानियों का सर्जन किया। लक्ष्मणराव सरदेसाय ने इस प्रकार की कहानियाँ कोंकणी और मराठी में लिखीं। शणै गोंयबाब ने उक्त विभाजन से हटकर अपनी मौलिक प्रतिभा से कहानी को एक नया स्वरूप प्रदान किया। इन्हें आधुनिक कोंकणी-कथा का प्रवर्तक माना गया। शणै गोंयबाब की मान्यता थी कि कथा-लेखन का उद्देश्य मात्र मनोरंजन नहीं होता अपितु यह एक प्रकार का शोध-कार्य है। इन्होंने कथा-लेखन के माध्यम से जीवनशोध, परम्पराशोध, भाषाशोध, शास्त्रसम्मतशोध आदि विषयों को स्पर्श किया। सामान्य रूप से मानव-स्वभाव का शोध ही कोंकणी कथा-लेखन का उद्देश्य हो गया।

गोवा-मुक्ति-संग्राम से जुड़े वरिष्ठ पत्रकार और संपादक चन्द्रकांत केणी (1934 ई०) आधुनिक कोंकणी-कथा-लेखन के जनक माने जाते हैं। आपको काका

कालेलकर, साने गुरुजी, विनोबा भावे, रवीन्द्र केळेकार जैसे महान् व्यक्तियों का सान्निध्य प्राप्त हुआ था। केणी की कहानियों में राष्ट्रीयता, स्त्री-मन की गहराइयों की परख, प्रेममय जीवन, नारी-पुरुष-संबंध, लैंगिकता का अन्वेषण, कामवासना आदि विषय मुखरित हुए हैं। इनकी कुछ कहानियाँ गोवा-प्रेम एवं मुक्ति-संग्राम को केन्द्र में रखकर लिखी गयी हैं। 'धर्तरी अजून जियेताली' (1964 ई०), 'आशाड पांवळी' (1973 ई०), 'अळमी' (1975 ई०), 'व्हंकलपावणी' (1985 ई०), ('भूंय चांफी') आदि केणी के महत्त्वपूर्ण कथासंग्रह हैं। आपको 1989 ई० में 'व्हंकल पावणी' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से नवाजा गया। इनके 1975 ई० में 'एकलो एकसुरो' उपन्यास तथा 'तरेतारेंची संवगाँ' कहानी-संग्रह भी प्रकाशित हुए।

लक्ष्मणराव श्रीपादराव सूर्याजीराव सरदेसाय कोंकणी के सशक्त कथाकार थे किन्तु मराठी की तुलना में कोंकणी में बहुत कम कहानियाँ लिखीं। मराठी में आपकी सात सौ से ऊपर कहानियाँ प्रकाशित हुईं। आपने अपनी थोड़ी-सी कोंकणी-कहानियों में जीवन की नयी संवेदना भर दी है। आपका 1982 ई० में 'खबरी : काँय कर्माच्यो काँय वर्माच्यो' कथा-कहानियों का संग्रह प्रकाशित हुआ जिसपर साहित्य अकादमी का पुरस्कार मिला है।

बाळकृष्ण भगवन्त बोरकार, मनोहरराय लक्ष्मणराव सरदेसाय, पाण्डुरंग भांगी, सुमन्त केळेकार, उदय भेम्ब्रे, यशवंत पालेकर, विष्णु नायक, सुरेश काकोडकर आदि वरिष्ठ कोंकणी-लेखकों ने कथालेखन किया है किन्तु दुर्भाग्यवश उनके कथासंग्रह प्रकाशित नहीं हो सके। म्हाम्बरो ने 1971 ई० में 'प्रसादा-फूल' नाम से तेरह कथाकारों की कहानियों का एक संग्रह संपादित किया। अरविन्द नारायण म्हाम्बरो को 'अना म्हाम्बरो' नाम से जाना जाता है जिन्होंने 'ऐब्सर्ड' शैली में ललित कथा लेखन का प्रयास किया। इनकी 'गोंयची अस्मिताय' (गोवा की अस्मिता) एवं 'पणजी आताँ म्हातारी जाल्या' जैसी पाठकोपयोगी रचनाएँ अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं जो 1985 ई० में प्रकाशित हुईं।

फेलोसियु कार्दोझ (1932 ई०) का 1966 ई० में प्रकाशित 'तूफान' कथासंग्रह रोमन लिपि में है। दामोदर मावजी (1944 ई०) की कथाएँ उनके 'गाधन' (1974 ई०) और 'जागरण' (1975 ई०) काव्यसंकलन में संकलित हैं। उनका एक लघु उपन्यास 'सूड' 1975 ई० में और 'काणी एका खमिसाची' शीर्षक बालकहानियों का संग्रह 1976 ई० में आया। रामकृष्ण जुवारकार ने कविता एवं एकांकीलेखन के साथ-साथ कहानियाँ भी लिखी हैं। इनका 1981 ई० में 'आमच्यो खबरो' संग्रह तीन भागों में प्रकाशित हुआ। महाबळेश्वर सैल (1945 ई०) ने मानव-जीवन के संघर्षों को 'तरंगा' (1991 ई०) संग्रह में सफल अभिव्यक्ति दी है। तोमाझिन कार्दोझ के

'झेलो' (1985 ई०) और प्रभाकर तेण्डुलकर के 'कथा-घोंस' (1986 ई०) की ओर आलोचकों का ध्यान नहीं गया।

कोंकणी-कथाकारों की अगली पीढ़ी में पुण्डलीक नारायण नायक ('मुठ्य', 'पिशान्तर' एवं 'अर्दूक') हेमा घुमटकार-नायक ('पसय', 1982 ई०), शीला नायक-कोळम्बकार ('ओली सांज'), मीना गायतोण्डे-काकोडकार ('दोंगर चंवल्ला'), जयमाला चोडणेकार-दणायत ('कवासों', 1978 ई०), माया असोक्डेकार खरंगटे ('घोंटेर'), एन० शिवदास ('गळसरी' एवं 'भांगरसाळ'), दत्ता नायक ('एक आशिल्लो सोंसो'), अशोक भोंसलो ('खुटावणी'), ओलिविन्यु जुजे फ्रान्सिस गॉम्मिश ('मन वोडटा-वोडना', 1981 ई०), गजानन जोग, नारायण कृष्ण शेणवी बोरकार ('तुज्या मोगा खातीर', 1984 ई० और 'चैतन्य', 2002 ई०), रामचन्द्र शिरोडकर उपनाम शशांक सीताराम ('नबत'), जयंती नायक ('गर्जन', 1990 ई० एवं 'अथांग', 2002 ई०), शशिकांत पुनाजी ('करुंक गेलो एक'), वसन्त भगवन्त सावन्त ('खेमसुत्री'), विठ्ठल आवदियेंकार ('आवय'), नारायण बोरकार ('तुज्या मोगा खातीर'), अच्युत तोटेकार ('चैत्रांगण', 1988 ई०), देविदास कदम ('कांदळाँ') आदि कथाकारों की रचनाओं में बहुआयामी सौन्दर्य-चेतना का आविष्कार हुआ है। इनमें रामचन्द्र शिरोडकर (शशांक सीताराम) को उनके 'परिघ' कहानी-संग्रह पर दिसम्बर 2003 ई० में साहित्य अकादेमी पुरस्कार प्राप्त हुआ। ये एक अच्छे चित्रकार और रंगकर्मी भी थे। दुर्भाग्य से इनका देहान्त मात्र 41 वर्ष की अवस्था में 1994 ई० में हो गया।

दीपा मुरकुण्डे ने अपनी रचना 'उमजणी' में नारी-जीवन के विविध आयाम प्रस्तुत किये हैं। इनकी 'नुपी', 'चिमी' जैसी कुछ कहानियाँ बालसाहित्य से संबंधित हैं। इस पीढ़ी के कहानीकारों में हेमा नायक का विशिष्ट स्थान है क्योंकि इन्होंने अपनी कहानियों में जीवन के दाहक अनुभवों को मूर्त रूप दिया है। फ० य० प्रभुगाँवकार ने मराठी के मूर्धन्य विचारक और गाँधीवादी साहित्यकार पाण्डुरंग सदाशिव साने के जीवन पर आधारित कहानियाँ ('श्यामची आई', 2002 ई०) लिखी हैं। रोमन एवं देवनागरी लिपियों में लिखित ॲन्थनी मार्टिन बारेंतु उपनाम टोनी मार्टिन के ('मुक्त जीण जियेतना' 2001 ई०) में ऐसी रचनाएँ हैं जो कथा एवं कहानी की सीमा रेखा पर हैं। गोवा के निकटवर्ती प्रदेशों में कोंकणी-कथा-लेखन का कार्य बहुत हुआ है। कर्नाटक में फ्रान्सिस साल्दाज्ज्य के चौदह कथासंग्रह प्रकाशित हुए हैं। सिरिल सिक्वैरा ('दुकाँ', 1978 ई० एवं 'कोशेदान केळ्ळीखून', 1980 ई०), लिओ-डि-सौझा ('लिमाचो भुरगो'), सिल्वेस्टर-डि-सौझा ('अपरिचित, 1981 ई०), चा० फ्रा०-डि-कॉश्त ('मेळ्ळें', 1994 ई०), जु० सा० आल्वारिस ('कथांहार') आदि कथाकार भी इस संबंध में उल्लेखनीय हैं। गोवा के युवा कथाकारों में प्रकाश

पर्येकार की कई कहानियाँ प्रसिद्ध हुई हैं। उनकी 'सुप्त ममता', 'महाबळी', 'वर्सल', 'आनी ते पोट घेवन गेले' आदि कहानियों में से कुछ का अँगरेजी और हिन्दी में अनुवाद भी हो चुका है। अभी तक इनका कोई कहानी-संग्रह प्रकाशित नहीं हुआ है लेकिन यहाँ की कोंकणी-पत्रिकाओं में इनकी कहानियाँ खूब छप रही हैं। महिला कथाकारों में जयंती नायक कहानी-लेखन की दिशा में सक्रिय भूमिका निभा रही हैं। आपका 'अथांग' कहानी-संग्रह 2002 ई० में प्रकाशित हुआ।

उपन्यास

गोवा में मराठी-उपन्यास-लेखन की परम्परा रही है किन्तु कोंकणी में पहले केवल कन्नड़ एवं रोमन लिपियों में उपन्यास-लेखन का कार्य प्रारंभ हुआ। 1930 ई० के दरम्यान देवनागरी में 'संसार बुड्टी' शीर्षक से उपन्यास लिखा गया जिसे उपन्यास कहना मुश्किल होगा।

वयोवृद्ध साहित्यकार, समाजसेवी, गाँधीवादी विचारक तथा ज्ञानपीठ एवं साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त रवीन्द्र केळेकार (1925 ई०) ने 'तुळशी' शीर्षक से एक लघु उपन्यास लिखा। यह नारी के क्रंदन का दर्पण है किन्तु कथानक, पात्र-चित्रण, स्थान एवं काल विशेष को लेकर अनेक विसंगतियाँ हैं। रचना की कलात्मकता में भी कई खामियाँ हैं, फिर भी यह कोंकणी-उपन्यास की गंगोत्री है। 'तुळशी' से कोंकणी-उपन्यास की दिशा निश्चित हो गयी। आज के उपन्यासों में यहाँ की परम्परा एवं जीवन-शैली का जो स्वरूप दिखायी दे रहा है उसका नाता किसी न किसी रूप में 'तुळशी' से जुड़ता है। कोंकणी-क्षेत्र के मानव-जीवन की गतिविधियों तक ही सीमित रहने के कारण कोंकणी-उपन्यास क्षेत्रीय बन गया है।

पुण्डलीक नारायण नायक का 'बाम्बर' (1976 ई०) उपन्यास भी उक्त उपन्यास की भाँति अपवादस्वरूप माना गया। यह मध्यम वर्ग की मानसिकता को आधार बनाकर लिखा गया है। यहाँ पहले एक बात पर विचार कर लेना समीचीन होगा कि मध्य वर्ग की परिकल्पना संकीर्ण मानसिकता से निर्मित है। वह आँखों देखे विश्व को ही खरा मानकर उसीके अनुसार जीने की मानसिकता बना लेता है। मध्य वर्ग समाज का निषेध न करके उसीमें समाविष्ट करने का प्रयत्न करता है। फलतः स्वयं की मानसिकता को अपने वश में न कर संबंधित लेखकों की रचनाओं से प्रभावित होकर मनोवैज्ञानिक स्तर पर वह द्वंद्व की दशा में जीता है। मध्यम वर्गीय जीवन एवं उसके सोच के कई स्तर होते हैं। किसी उपन्यासकार की जीवन-दृष्टि को स्वयं की दृष्टि से नहीं नापा जा सकता। 'बाम्बर' में व्यापक

जीवनानुभवों का अभाव दिखायी देता है। नायक की सशक्त औपन्यासिक दृष्टि उनके दूसरे उपन्यास 'अच्छेव' (1977 ई०) में देखी जा सकती है। यह उपन्यास मूलत: गोवा में खनिज उद्योग के बढ़ते चरण के कारण विनष्ट होती हुई प्राकृतिक संपदा को दरसाता है। यह उपन्यास कथ्य एवं शिल्प की दृष्टि से बेजोड़ है। कोंकणी भाषा का जो प्रांजल रूप इस उपन्यास में देखा जाता है, वह स्पृहणीय है।

तुकाराम शेट का 'पाखलो' (1978 ई०) उपन्यास गोरे पोर्तुगीज ख्रिस्ती द्वारा हिन्दू स्त्री पर हुए बलात्कार से उत्पन्न संतति के जीवनयापन की कथा है जिसका नाम विठु है। गोवा में गोरे लोगों को पाखलो कहा जाता है। विठु किसी को भी स्वीकार्य नहीं है मानो उसे जीने का अधिकार ही नहीं है। यथार्थ जीवन एवं घटना पर आधारित होने के बावजूद कलात्मक एवं जीवनदृष्टि के अभाव के कारण उपन्यास प्रसिद्ध नहीं हो सका।

लक्ष्मणराव सूर्याजीराव सरदेसाय का 1979 ई० में प्रकाशित 'पापडाँ कवळयो' एक लघु उपन्यास है जिसमें गोपाल के असहाय जीवनयापन की पीड़ा और आत्महत्या के प्रयत्न का वर्णन है। इसे आत्मकथात्मक रचना भी कहा जा सकता है। सरदेसाय जी पोर्तुगीज एवं फ्रेंच भाषा के शिक्षक थे। उन्होंने आनातोल-द-फ्रान्स, एमिल जोला, गी-द-मोपासाँ, जुलिओ दिनिझ, सॉमरसेट मॉम जैसे विश्वविख्यात साहित्यकारों की रचनाएँ याद कर ली थीं। उन्होंने मराठी में विपुल मात्रा में साहित्य-सर्जन किया। कोंकणी में योगदान अत्यल्प है।

फादर आन्तोनियु पैरैर (1919 ई०) ने 'वादळ आनी वारें' (1979 ई०) उपन्यास की रचना की। उन पर मॉरिस वेस्ट (द शूज ऑफ द फिशरमैन), पर्ल बक (सॅटन नेव्हर स्लीप्स), जॉर्जीस बर्नानोस (ए कण्ट्री प्रीस्ट) आदि रचनाकारों की रचनाओं का प्रभाव पड़ा था।

दामोदर मावजो (1944 ई०) के 'कार्मेलिन' उपन्यास को काफी लोकप्रियता मिली उसका हिन्दी-रूपान्तरण नारायण शेजवलकर ने किया है। प्रस्तुत उपन्यास ईसाई एवं मुस्लिम संस्कृति पर आधारित है। इसमें अर्थाभाव के कारण नौकरी के लिए गोवा से कुबैत और दुबई जानेवाली ईसाई महिलाओं के यौन शोषण को चित्रित किया गया है। लेखक ने एक जगह स्वयं स्वीकार किया है कि मैं ईसाइयों के बीच रहकर उनकी संस्कृति का अभिन्न अंग बन गया हूँ। दामोदर मावजो ने ईसाई संस्कृति को इस उपन्यास में बड़ी बारीकी से चित्रित किया है। कार्मेलीन का सम्पूर्ण जीवन त्रासदी से भरा है।

हेमा नायक का 1997 ई० में प्रकाशित 'भोगदंड' उपन्यास गोवा के क्षेत्रीय

जीवन पर आधारित है। इसमें एक ईसाई परिवार की व्यथा-कथा और उसके गाँव की सम्पूर्ण संस्कृति को व्यक्त किया गया है। कोंकणी की महिला रचनाकारों ने नारी की वेदना को बड़ी संजीदगी से उभारा है। इस रचना पर 2002 ई० में इन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

प्रभाकर नाडकर्णी ने प्रसिद्ध हिंदी-लेखक भगवतीचरण वर्मा के 'चित्रलेखा' उपन्यास का 2002 ई० में कोंकणी में अनुवाद किया। जेस्स फर्नाण्डिस, फेलिसियु कार्दोझ, फादर आन्तोनियु पेरैरने आदि ख्रिस्ती लेखकों ने रोमन लिपि में उपन्यास लिखे हैं।

आजकल कोंकणी-उपन्यासों के दो वर्ग हो गये हैं–देवनागरी उपन्यास और रोमांस। देवनागरी लिपि में लिखित कोंकणी के उपन्यासों को देवनागरी उपन्यास और रोमन लिपि में लिखित कोंकणी के उपन्यासों को रोमांस कहा जाता है। रोमांस उपन्यास अधिकतर ख्रिस्ती लेखकों द्वारा लिखे जाते हैं परन्तु रमाकान्त पोवळेकार, मनोहरराय लक्ष्मणराव सरदेसाय एवं व्यंकटेश आळवेंकार जैसे हिन्दू रचनाकारों ने भी रोमांस की रचना की। इस प्रकार की रचनाओं में सौन्दर्य, प्रेम, साहस, पराक्रम जैसे जीवनानुभवों को कल्पना और यथार्थ के सामंजस्य द्वारा प्रस्तुत किया जाता है।

जिप्सी नामक लेखक ने 1882 ई० में 'जाकोब आनी दुल्से' शीर्षक से प्रथम कोंकणी रोमांस उपन्यास लिखा था। ऐसी मान्यता है कि एदुआर्दु ब्रुनो-द-सौझा का 'किरिस्ताँव घराबो' रोमांस उपन्यास उनकी मृत्यु के उपरान्त प्रकाशित हुआ। इसमें आदर्श ख्रिस्ती गृहजीवन की झलक मिलती है। कारिदाद दामासियानु फर्नाण्डिस को रोमांस रचना का जनक कहा जाता है। रेजिनाल्ड फर्नाण्डिस ने 'अरबेस्का', 'आमोरेस्का', 'गुलाब', 'घातक्याक घाप', 'तोस्का', 'देवचाराचो सांगाती', 'धरुन अस्तुरी', 'सिंगापुराचो सावकार' जैसे लगभग दो सौ से अधिक रोमांस उपन्यासों की रचना की। इनके अतिरिक्त जूवाँव कायतान-द-सौझा, आन्तोनियु विन्सेन्त दा क्रुझ, एलियट-द-एली, एफ० एल्स० फर्नाण्डिस, बोनावेन्तुर-द-पियेत्रु, तॉम जॉन डायस, आन्तोनियु-डि-सौझा, दियुगुन्यु डि मेलो, ए० वी० डी० कुझ, सी० डी० सी० रोमान, जे० एक्स पेरैरे, सेबिस्तियाँव गाब्रिएल-द-सौझा आदि रचनाकारों के नाम रोमांस-लेखन के लिए जाने जाते हैं। आज जिस प्रकार हिन्दी में गुलशन नंदा, रानू आदि के उपन्यास बिकते हैं उसी प्रकार उक्त ख्रिस्ती रचनाकारों के रोमांस उपन्यासों की विपुल मात्रा में बिक्री होती थी।

ललित निबन्ध

कोंकणी-साहित्य में निबंध-लेखन की परम्परा बीसवीं सदी के प्रारम्भ से मानी जाती है। 'आवय' (माता) जैसे लोकप्रिय हस्तलिखित तथा नियतकालीन पत्र-पत्रिकाओं

में प्रकाशित लेखों को एकत्र कर संगृहीत करने का प्रयत्न आरंभ हुआ था। इसे सम्पादन करने का प्रयत्न भी स्तुत्य था क्योंकि इससे अन्य संपादकों को प्रेरणा भी मिलती थी। 'वोवळाँ' (1932 ई०) नामक संपादित पुस्तक कुछ गिने-चुने लेखों का संग्रह है। प्रोफेसर आर्मान्द मिनेझिस, रेवरेंड हे ऑलिम्पियु माश्कारन्हेयश, आनंदयात्री बाळकृष्ण भगवंत बोरकार ('बाकीबाब बोरकार'), लक्ष्मणराव सरदेसाय, मंजेश्वर गोविन्द पै, दिनकर देस्साय, पुरुषोत्तम लक्ष्मण देशपाण्डे, मंगेश पाडगाँवकर, हिराबाय कर्नाड आदि के समान विद्वानों ने निबंध-लेखन का कार्य किया। सन् 1960 ई० में संपादित कोंकणी-लेखसंग्रह 'स्वाती' पुस्तक का घर-घर वाचन होता था। गोवा के अधिकांश लेखकों एवं पाठकों के ध्यान में पुर्तुगाल होता था। वे गोवा और भारत के बारे में उतना नहीं सोचते थे। मराठी में भी पुर्तुगाल की प्रशंसा में गीत लिखे गये।

केळेकार तथा रघुनाथ विष्णु पंडित जैसे मूर्धन्य चिंतकों ने राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के संबंध में कोंकणी-पुस्तकों की रचना की। विष्णु पंडित ने गाँधी के सैकड़ों छायाचित्र खींचे एवं कोंकणी प्रेक्षकों को दिखाये। आज भारत सरकार द्वारा जारी नोटों पर बना हुआ गाँधी का चित्र पंडितजी द्वारा खींचा हुआ है। पंडितजी ने अपने पुत्र चंद्रशेखर के नाम 'दिसपट्टी' यानी डायरी लिखी। रवीन्द्र केळेकार ने भी 'वेळेवयल्यो घुलो' नाम से डायरी लिखी। उन्होंने 'उजवाडाचे सूर' (1972 ई०) पुस्तक लिखकर कोंकणी के पाठकों को भारतीय दर्शन का परिचय कराया। 'हिमालयांत' (1971 ई०) निबंध-संग्रह में उनके प्रवास से संबंधित निबंध संकलित हैं। उनके खगोलशास्त्रीय चिंतन का परिचय 'ब्रह्माण्डाचें ताण्डव' से होता है। उनका 'तुळसी' नामक ग्रंथ उनके समाजविषयक चिंतन का परिचायक है। केळेकार के 'सांगाती' (1977 ई०) एवं 'भजगोविन्दम्' कृतियों से उनके अध्ययन-मनन की गहराई का पता चलता है। उन्होंने कोंकणी के पाठकों को विश्वकवि गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर से सुपरिचित कराया। आपने 'जाग' (सुमंत केळेकार द्वारा संचालित) नियतकालीन पत्रिका का पच्चीस वर्ष तक सफल रूप से सम्पादन किया। इसमें उनके गंभीर विषयों पर सम्पादकीय लेख छपे तथा गाँधीवाद, विनोबादर्शन, टैगोर, समाजवाद, पूँजीवाद, उपभोक्तावाद, आतंकवाद आदि समसामयिक विषयों से 'जाग' के पाठकों को परिचित कराया। इतना ही नहीं, कोंकणी विचारकों के लिए उन्होंने एक मंच भी तैयार किया। उन्होंने इस प्रकार के लेखन के दौरान 'कथा आनी काणयो' (1961 ई०), 'नवीं शाळा' (1962 ई०) 'लाला आबा' (नाटक) आदि ग्रन्थों की रचना की। राष्ट्रीय एवं समसामयिक विषयों पर आधारित केळेकार का विचारात्मक निबंधों का संग्रह 'घुस्पलें जानवें' 2000 ई० में प्रकाशित हुआ।

आन्तोनियु-द-सौझा ने शास्त्रविज्ञान से संबंधित लेखन-कार्य किया। उनके तीन

ग्रंथ 'चन्द्रीम-ताखाँ', 'हिपासया प्रितुम तपासता', और 'संवसार अजापांचें बिराड' 1980 ई० में एवं 'कुडीचें विजमित भलायकेचे' 1982 ई० में प्रकाशित हुए। इन कृतियों से कोंकणी-साहित्य समृद्ध हुआ।

शोधप्रबंध के लेखन को शणै गोंयबाब (रघुनाथ वामन वर्दे वालावलिकार) ने दिशा दी थी। इनके आदर्शों एवं मानदंडों का अनुकरण कर वासुदेव कामत वाघ (1910-1965 ई०), दत्ता श्रीपाद नायक ('घटक राजयाच्यो भोयो भोयो आता तरी थारतोल्यो व्हय', 2002 ई०), सुहास दलाल, नंदकुमार कामत आदि लेखक रचना-कर्म में निरत हैं। फादर आन्तोनियु परैरा के 'साश्टीची-ताम्बडी माती' (1984 ई०) में कुंकळळी-सासष्टी में धर्मांतर से उत्पन्न विग्रह में पादरी रुदॉल्फ आक्वाविवा और उनके सहयोगियों की मृत्यु के संदर्भ में शोधकार्य प्राप्त होता है। कर्नाटक-स्थित पादरी रुदॉल्फ-डि-सौझा ने 'कार्मेलायटाँचो तकलेंतलो देवचार' और वि० एल० रेगो ने 'योग अभ्यास' शीर्षक पुस्तकें लिखी हैं।

कोंकणी की नियतकालीन पत्र-पत्रिकाओं में ललित निबंध-लेखन का कार्य प्रचुर मात्रा में हुआ है। इसकी तुलना में निबंध-संग्रहों के प्रकाशन की संख्या कम है। 'उदेन्तेचें साळिक', 'अंकुर', 'कुळागर', 'कोंकण टाइम्स', 'कोंकण भारती', 'गुलाब', 'गोमन्त भारती', 'गोंयचो आवाज', 'जाग', 'जैत', 'परमळ', 'परशुराम', 'पुनव', 'प्रजेचो आवाज', 'मीर्ग', 'त्रिवेणी', 'दर महिन्याची रोटी', 'दिवटी', 'नवें गोंय', 'राष्ट्रमत', 'लोकसाद', 'वावराड्याचो इस्ट', 'विद्या', 'वांगडी', 'सत', 'साद', 'साळिक', 'सूनापरान्त' आदि बहुत-सी पत्र-पत्रिकाओं में निबंध-लेखन का कार्य खूब हुआ है।

आधुनिक कोंकणी ललित निबंधकारों में अरविन्द नारायण यानी अना म्हाम्ब्रो (1938 ई०), अच्युत तोटेकार, अभयकुमार वेलिंगकार, किसन कामत, गजानन जोग, गोविन्द मुद्रस, चन्द्रकांत केणी, पुण्डलीक नारायण नायक, पुरुषोत्तम सिंगबाळ, मनोहरराय लक्ष्मणराव सरदेसाय, महाबळेश्वर सैल, मांन्सियोर कार्मु दा सिल्व, तानाजी हळर्णकार, तुकाराम रामा शेट, तेनसिंग रुद्रिगीश, दत्ताराम सुखठणकार ('मान्नी पुनव', 1978 ई०), दामोदर मावजो, दीपा मुरकुण्डे ('भौरंगी जीण' एवं 'पडबिम्ब', 2002 ई०), नारायण लाड ('साँळकाँ'), नीळकण्ठ धूमे, लुसियु रुद्रिगीश, लीन हेदे, वसन्त नेवरेंकार, विष्णु नायक, रवीन्द्र केळेकार, रामकृष्ण जुवारकार, रामचंद्र शंकर नायक, लक्ष्मणराव सूर्या, जीराव सरदेसाय, शणै गोंयबाब, शान्ताराम हेदो, शंकर भाण्डारी ('पावलाँ कणकणी'), श्याम वेरेंकार, सॉतेर बारैतु, हेमा पुण्डलीक नायक आदि का नाम आता है।

ये लेखक गाँधीवादी, लोहियावादी, समाजवादी, धार्मिक सद्भाववादी, मात्र आनंदवादी,

छायावादी, स्त्रीवादी, राष्ट्रभक्तिवादी आदि विभिन्न विचारधाराओं से प्रभावित हैं। गोवा-मुक्ति के बाद यहाँ सामाजिक-सांस्कृतिक, आर्थिक, राजकीय, शिक्षाविषयक आदि कई क्षेत्रों में उथल-पुथल एवं बदलाव होने लगा। गोवा के लोग कर्मठ नहीं रहकर सुखजीवी हो गये जिसकी उम्मीद नहीं थी। आधुनिक गोवा के निर्माण में इस प्रकार की प्रवृत्ति घातक थी। स्वप्नवत् जीवनयापन करनेवालों को जब यथार्थ जीवन से टकराना पड़ा तो एक नयी परिस्थिति का जन्म हुआ। यहाँ की भाषा और संस्कृति को लेकर भी अनेक प्रश्न खड़े हुए। इन तमाम भयग्रस्त अवस्था में कोंकणी-निबंध-लेखन हुआ। यहाँ के लेखकों ने अतीत की संस्कृति एवं परंपरा, राष्ट्रभक्ति, महान् चरित्रों एवं समसामयिक विषयों को अपने निबंध का विषय बनाया।

नाटक

गोवा में नाटक की एक सुदीर्घ एवं सुदृढ़ परम्परा विद्यमान है। यहाँ महाराष्ट्र की अपेक्षा अधिक नाटक प्रदर्शित किये जाते हैं। इस छोटे से भू-भाग में सौ से अधिक मंदिर हैं। प्रत्येक मंदिर में आयोजित वार्षिक जत्रोत्सव, वसंतोत्सव एवं प्रतियोगिताओं में कम से कम पाँच-छह नाटक दिखाये जाते हैं। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यहाँ कितने नाटक प्रदर्शित किये जाते होंगे। इन नाटकों के विषय पारंपरिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, धार्मिक आदि होते थे। आश्चर्य की बात यह है कि आधुनिक कोंकणी-नाटक का प्रारम्भ मुंबई में हुआ। इसमें नाटक की कलात्मकता, विषयों की विविधता तथा वैचारिकता पर विशेष बल दिया गया। आधुनिक कथा-लेखन के जनक शर्णै गोंयबाब ने 1933 ई० में 'झिलबा राणो' नाम से नाटक लिखकर आधुनिक नाट्य लेखन की भी नींव डाली थी। इसी वर्ष आचार्य रामचंद्र शंकर नायक ने 'चवथीचो चन्द्र' से एकांकी-लेखन की परंपरा की शुरुआत की। दादा वैद्य ने 'प्राची सभा' नामक नियतकालीन पत्रिका के माध्यम से अनेक कोंकणी-साहित्यकारों की कविताओं एवं नाटकों का प्रकाशन कर उन्हें प्रसिद्धि दी। अंतरमहाविद्यालयीय नियतकालिक पत्रिका 'विद्या' के चार अंकों में कोंकणी-एकांकी प्रकाशित हुए। कोंकणी समाज में साहित्य के वाचन, श्रवण और प्रेक्षण की भूख का अनुभव कर विचारवान् साहित्यकारों ने उनकी मानसिक क्षुधा को शांत करने के लिए हास्य, करुण, वैचारिक, प्रयोगशील एवं अनूदित नाटक तथा एकांकी-लेखन की शुरुआत की। गोवा कला अकादेमी ने कोंकणी-नाटकों के लिए रंगभूमि तैयार कर लेखकों और रंगकर्मियों को प्रोत्साहित किया। प्रत्येक वर्ष नाटक एवं एकांकी प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाने लगा। इसका परिणाम यह हुआ कि दिगंबर सिंगबाळ, श्रीधर-कामत बांबोळकार, अरुणकुमार साळगाँवकार, किरीटकुमार प्रभु, सुनील नायक, दिलीप गाड आदि नये नाटककार एवं एकांकीकार उभरकर सामने आये।

पुण्डलीक नारायण दाण्डो ('ताची करामात', 'निमित्ताक कारण'), किसन कामत ('दोन आनी दोन', 'बाप्पा शिवराक', 'बाप्पाली म्हस', 'बाप्पाली हुडदामेथी', 'बाप्पा भर्जी गाळटा'), कृष्णा लक्ष्मण मोयो ('घाडीकृष्णा', 'तुळशीचें लग्न' तथा एकांकिका 'हारशाच्या कुडींत भांगराची दिवली'), वसन्त-वैकुण्ठ कारो, रघुवीर नेवरेंकार ('पोपेबाबाली मुंबय'), विश्वनाथ संझगिरी, अवधूत हेगडो-देसाय, विनय सु-सुर्लकार ('खाँवची पानाँ', 'सातमजली हाँसो'-एकांकी) आदि वयोवृद्ध और श्रेष्ठ नाटककार हैं। कवि मनोहरराय लक्ष्मणराव सरदेसाय के तीन नाटक 'स्मगलर' में संगृहीत हैं जिनमें से 'आयज रे धोलार पडली बडी' का संगीत अत्यधिक लोकप्रिय है। 'खँय गेल्लो खँय ना', 'साखरभात', 'दोतोर बातियाँव' और 'मोग आनी रगत' मनोहरराय की लोकप्रिय रचनाएँ हैं। वरिष्ठ रचनाकार रवीन्द्र केळेकार ने 'मुक्ति', 'लोग', 'पिसोळी', 'पेज', 'इगो' आदि शीर्षकों से एकांकी की रचना की।

प्रख्यात नाटककार और साहित्य अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित पुण्डलीक नारायण नायक ने कोंकणी-नाटक को एक नया कलेवर प्रदान किया। हास्य एवं शोक नाटक के स्थान पर नायक ने सामाजिक जीवन की विसंगतियों को केन्द्र में रखकर नाटक लिखा। नाटक बहुसंख्यक लोगों की धड़कनों से जुड़ा। इन्होंने 'गाँवधनी', 'गाँवकार', 'आळशाक वाग खातलो', 'आकाशमंच', 'छप्पन थिगळी येसवंत', 'चौरंग' आदि प्रसिद्ध एकांकियों की रचना की। इनकी भाषा आंचलिक होकर भी संप्रेषणीय, भावानुगामिनी एवं विश्वसनीय है। यद्यपि नायक ने नाटकों का सर्जन मंचीय दृष्टि से किया तथापि पठनीयता की दृष्टि से भी वे उपयुक्त हैं।

अशोक कामत ('अशोकांकी', 'म्हजी भूँय म्हजो मोग', 'कोण कोणाचो न्हय', 1968-75 ई०), दत्ता नायक, हेमा पुण्डलीक नायक ('भायली गोडी') तथा फादर निकोलॉव्ह पेरैरा ने भी एकांकी-लेखन का कार्य किया। एन० शिवदास ('पिसांट', 1979 ई० एवं 'फॉरेन जांवय' नाटक तथा 'ज्योतिस फितिस', 'पुतळे', 'भायर-भीतर'-एकांकी), दिलीप बोरकार ('भरते भार', वर्ग शत्रु'), रामकृष्ण जुवारकार ('भागीरथी',1970 ई०, 'आमचें राज्य', 1971 ई०, 'अनवळखी', 1975 ई०), रवींद्र नमशीकार ('आँकवार काजारी'), दत्ताराम दामोदर कामत बाम्बोळकार ('डॅडी'), उदय लक्ष्मीकांत प्रभु भेम्ब्रे ('कर्ण-पर्व') आदि रचनाकारों ने नाटक एवं एकांकियों की रचना की। कतिपय नाटककारों ने मानव-जीवन की उदात्तता एवं शोक-संतप्तता को पौराणिक कथाओं के माध्यम से व्यक्त किया। इन्होंने कोंकणी रंगभूमि के द्वारा विविध विषयों से दर्शकों का परिचय कराया।

प्रकाश थळी ('एक आसलो बाबू', 'अजीबपुरातली कल्पकथा', 'उजवाडतलें

आयज ना फाल्याँ', 'प्रिया तुज्या मोगाखातीर', 'वाट पळयतनाँ दुकांगळयताँ', 'आयलें हड्ड्यार घातलें खोड्ड्यार', 'घर म्हजें हाँव धनी', 'उक्तावण' आदि नाटक लिखे तथा 'तीन खेतीं शाणी सुरतीं' नामक एक एकांकी-संग्रह भी 1987 ई० में प्रकाशित किया। इन्होंने इतर भाषाओं के नाटक एवं एकांकियों का कोंकणी में अनुवाद भी किया। भरत नायक ने 'चपलाँहार', 'बॉबी न्हिदता', 'चामड्याक चिमटो', 'भेरें भेरें टुणटुणे' आदि पन्द्रह नाटिकाएँ लिखी हैं। चन्द्रकान्त पार्सेकार ने 'कोंकणी एकांकिका' (1967 ई०) एवं 'देंवचार आनी हेर कोंकणी एकांकिका' का सर्जन किया। उन्होंने पचास नाटक भी लिखे हैं।

विजय कुमार कामत ('चित्रांतलें घर'), राज नायक ('खुरिस उबारुँक जाय'), श्रीधर कामत ('इन्तेर'), सु० म० तडकोड ('कॅस्केड'), धर्मानंद वेर्णेकर ('एक जयराम साजुलो'), दत्ताराम बांबोळकार ('वनमहोत्सव'), दिलीपकुमार नायक ('आजून शाळा सुटूंक ना') आदि कोंकणी के उभरते हुए एकांकीकार हैं। तुकाराम शेट ने 'फुटपायरी', 'आमी' और 'एक जुंवो जियेता' की रचना की तो मधुसूदन बोरकर ('हांसोळी'), शैलेशचन्द्र रायकर, जे० एल० गोयस, सुमन्त भट, गोकुळदास मुळवी, सुहास सावर्डेकार, मीना सुरेश काकोडकार, हेमा पुण्डलीक नायक, अनिरुद्ध बीर (गॉन वियदविंड), कमल कामत ('आंधळो मागता एक दोळो'), नयना आडारकार, अभयकुमार वेलिंगकार, अशोक भोसले, तेनसिंग रुद्रिगीश, सतीस सोनक, द० वा० तळवणेकार आदि चर्चित नाटककार हैं। शॅरॉन माझारेलो ('जिवीत एक तियात्र'), माया खरंगटे ('चौफूल') और श्रीकांत शम्भू नागवेकार ('खगोलशास्त्रीय नाट्यांगण') ने नाटिकाएँ लिखी हैं। कोंकणी में सामान्यत: गीतिनाटक नहीं लिखे गये थे किन्तु विठ्ठल थळी ने 'संगीत सैमाचो खेल' (2002 ई०) गीतिनाटक लिखकर नयी परम्परा स्थापित की। देवदासी प्रथा के विरोध में अविनाश यशवंत चारी ने 'एका विचाराची सुखात' (2003 ई०) नाटक की रचना की। महाविद्यालयीय जीवन से सम्बन्धित 'ऑल फॉर यू' नाटक महेश चन्द्रकांत नायक ने लिखा।

कोंकणी भाषा में इतर भाषाओं के अनुवाद काफी मात्रा में किये गये। शणै गोंयबाब ने प्रचुर संख्या में अनुवाद का कार्य किया। इनके अतिरिक्त आनंदयात्री कवि बाळकृष्ण भगवंत शेणवी बोरकार ने मराठी से 'संशय कल्लोळ', पाण्डुरंग भांगी ने अँगरेजी से 'सालोमे', रामकृष्ण जुंवारकार ने फ्रेंच नाटककार मोलियेर के Le Bourgeois Gentillohmme नाटक का 'भुतेबाब' नाम से कोंकणी में अनुवाद किया। मनोहरराय लक्ष्मणराव सरदेसाय की 'शेजाज्याली सासुमाँय' रचना फ्रेंच नाटककार जॉर्जीस फिदाँ के 'Feu La Mere De Madame' नाटक का रूपांतर है।

शांताराम हेदी (1912 ई०) ने पुर्तुगीज नाटककार आल्मैद गारैट के 'Frei Luis De Souza' नाटक का 'यात्रिक' नाम से कोंकणी में अनुवाद किया।

जिस प्रकार कोंकणी-उपन्यासों के साथ रोमांस की चर्चा होती है उसी प्रकार कोंकणी-नाटकों के साथ तियात्र जुड़ा हुआ है। तियात्र का लेखन भी रोमन लिपि में ही अधिक होता है और अधिकतर तियात्र-लेखक ख्रिस्ती होते हैं। अपवाद-स्वरूप प्रेमानंद लोटलीकार, पी० सांगोडकार जैसे हिंदू लेखकों ने भी तियात्र की रचना की है। तियात्र-लेखन के प्रथम कालखण्ड में प्रत्येक दिन की घटनाओं के आधार पर कहानी लिखी जाती थी। दिन को महत्त्व नहीं दिया जाता था। कहानी से तालमेल बैठाने के लिए पाश्चात्य धुन में कोंकणी के गीत गाये जाते थे। तियात्र के बीच कई मध्यांतर होते थे। वर्तमान काल में तियात्र के स्वरूप में परिवर्तन होने लगा है। मध्यांतर लुप्त होने लगे हैं। विषय-वैविध्य के साथ-साथ रचना में कलात्मकता एवं संवादों में सूक्ष्मता लाने का प्रयत्न हो रहा है। जीवन के विविध क्षेत्रों से कथावस्तु का चयन किया जा रहा है। कोंकणी के नाटक और तियात्र में काफी अन्तर है। तियात्र अपनी प्रामाणिकता के कारण विश्व-स्तर पर प्रसिद्ध हो रहा है। गोवा विधानसभा के भूतपूर्व सभापति तोमाझिन कार्दोझ का 'काण्टेच काण्टे' (1981 ई०) और 'झगझगता तितलेंय भागेरन्हय' (1988 ई०) तियात्र अधिक लोकप्रिय हैं। इनके साथ फादर फ्रेडी डी कॉश्त का ('बाप्पा'), पॅट्रिक दौराद, एम० बॉयर, विल्मिक्स विल्सन माझारेलो ('दुरीग') आदि बहुचर्चित तियात्र-लेखक हैं।

स्मरणीय है कि गोवा के ख्रिस्ती लेखक तो तियात्र की रचना करते हैं परंतु कर्नाटक के ख्रिस्ती लेखक त्रियात्र न लिखकर नाटक ही लिखते हैं। चा० फ्रां० दि-कॉश्त ('तरणें तरणें मोणें', 1973 ई०, 'सुणें माजर हाँसता', 1977 ई०) और फादर ल्युईस बोतेल्यु ('बाळ आलेस' एवं 'देख देवीक') ने कोंकणी-नाटक को उन्नत करने के लिए अथक प्रयत्न किया। जे० पी० सालदाञ्ज्यने तिरपन नाटक लिखे हैं। उनके 'सरदारांची सिग्नल' नाटक में 124 पात्र हैं। दोल्फि लोबु कास्य ने सात, सिरिल सिक्वैरा ने बारह तथा जे० एस० आल्वास्सिने ने नौ नाटकों की रचना की है।

पत्रकारिता

आधुनिक मुद्रण-कार्य का आरंभ एशिया महाद्वीप में सर्वप्रथम 6 सितम्बर, 1556 ई० के दिन गोवा में हुआ। पहले यहाँ शब्दकोश, व्याकरण और पुस्तकों का मुद्रण शुरू हुआ। गोवा में पत्रकारिता ('गाजेति-द-गोवा') का प्रारंभ 22 दिसम्बर 1821 ई० को हुआ। पत्रकारिता के द्वारा ज्ञान की ज्योति को सम्पूर्ण गोवा में बिखेरने का प्रयत्न किया गया। इसके पहले जर्मनी (1663 ई०) और बंगाल

(1780 ई०) में पत्रकारिता की शुरुआत हो गयी थी। सन् 1840 ई० में कानोन कायतानु जुवाँव पीरीश के संपादकत्व में पुर्तुगीज भाषा में 'आल्मानाक-द-गोआ' पत्र निकला जिसमें विपुल मात्रा में जीवनोपयोगी विषयों एवं विचारों का समावेश रहता था। आगे चलकर गोवा-मुक्ति के बाद यह पत्र 1966 ई० में 'आल्मानाक' नाम से प्रकाशित होने लगा। जे० सी० फ्रांसीस ने 'उ कोंकानी' पत्रिका का सम्पादन कर कोंकणी-पत्रकारिता के इतिहास में प्रथम अध्याय का आरम्भ किया। विडम्बना यह है कि इसका प्रारम्भ मुंबई से हुआ। सी० एफ० फ्रान्सिस्कु, सेबस्तियाँव जिसस डाय-स गोमान्ति और सेबस्तियाँव जिसस डायस के सम्पादकत्व में क्रमशः 'उ लिउसु कोंकानी' साप्ताहिक (1891 ई०), 'उ कोंकानी' (1892 ई०) और 'उ पुव गोआनु' (1893 ई०), ये तीन पत्र निकले। इनके अतिरिक्त 'लेतुराश आमानाश' और 'आ सिविलिसासाँव इंदियान' पत्रिकाएँ भी निकलीं। सन् 1814 ई० में एक कोंकणी दैनिक निकला था जो शीघ्र ही बंद हो गया। यह कोंकणी-पुर्तुगीज-अँगरेजी भाषाओं में मुद्रित होता था।

'आ लुझ' (सं० इनासियु एक्स रुद्रिगीश), 'उ एको' (सं० बी० एफ० काब्र, 1907 ई०), 'उ गोआनु' ('सं० होनारातु एवं एफ० एक्स० फुर्तादु, 1908 ई०), 'उ आमिगु दु पुव' (सं० एस० एक्स व्हाज, 1916 ई०), 'आवे मारिया' (सं० आन्तोनियु व्ही दे कुझ 1920 ई०) आदि पत्रिकाओं ने कोंकणी के पाठकों का ज्ञानवर्धन एवं मनोरंजन किया।

कोंकणी भाषा में एदुआर्दु जे० ब्रुनो-द-सौझा के संपादन में 1889 एवं 1894 ई० में 'उदेन्तेचें साळिक' मासिक और पाक्षिक पत्र पुणे से तथा 'सांजेचें नकेत्र' दैनिक 1907 ई० में बी० एफ० काब्राल के संपादन में मुंबई से निकला। फादर लुदोविक पैरैर के संपादन में 1914 ई० में 'दर म्हयन्याची रोटी' मासिक पत्र पाकिस्तान के कराची से प्रकाशित हुआ जिसे आज भी फादर मोरेन-द-सौझा गोवा से प्रकाशित करते हैं। सन् 1928 ई० में जे० सी० एफ० दा सोझा ने 'आमचो संवसार' तथा फादर एल० ए० फर्नाण्डिस एवं फादर लाक्तानसियु आल्मेद ने 1933 ई० में क्रमशः 'उदेन्तेचें नेकेत्र' और 'वावराड्यांचो इश्ट' नामक पत्रिकाएँ निकालीं जो काफी लोकप्रिय रहीं। ये सारी पत्रिकाएँ रोमन लिपि में मुद्रित होती थीं।

कोंकणी-पत्रिकाएँ 1953 ई० से देवनागरी में मुद्रित होने लगीं। आनंदयात्री कवि बालकृष्ण भगवन्त शेणवी बोरकार ने 1953 ई० में 'प्रजेचो आवाज' रोमन तथा देवनागरी लिपि में प्रकाशित की। मनोहरराय लक्ष्मणराव सरदेसाय और फादर एच० ओ० मस्कारन्हेयश ने 1952 ई० में मुंबई से 'साद' पत्रिका का प्रकाशन

किया। कोंकणी भाषा मंडल की मुख पत्रिका 'गोमंत भारती' का संपादन रवीन्द्र केळेकार ने 1959 ई० में किया। इसमें विविध विषयों पर लेख प्रकाशित हुए तथा इससे नये लेखकों को प्रोत्साहन मिला।

गोवावासियों की आकांक्षा के अनुरूप फेलिसियु कार्दोझ के सम्पादन में 'गोंयचो साद' प्रकाशित हुई। संपादक ने पुर्तुगीज शब्दों के स्थान पर कोंकणी-शब्दों के प्रयोग पर बल दिया। इनका मानना था कि केवल कोंकणी-शब्दों से भी यह भाषा लिखी जा सकती है। इनका यह अत्यन्त यशस्वी प्रयोग था। वाक्यविन्यास के लिए नूतन शब्दाबली का प्रयोग होने लगा।

फेलेसियु कार्दोझ ने 'सत' पत्रिका प्रकाशित की जो आगे चलकर 1967 ई० में पुर्तुगीज 'अ विद' में विलीन कर दी गयी। कालान्तर में इन दो पत्रिकाओं के स्थान पर 'दिवटी' नाम से नयी पत्रिका प्रकाशित होने लगी। इस पत्रिका के संपादक द्वारा 'लोकसाद' शीर्षक से एक साप्ताहिक पत्रिका निकाली गयी। यथार्थवादी विचारधारा, कोंकणी भाषा के प्रति आदर एवं अन्याय के प्रति लोगों को जागरूक करना, ये सब इस पत्रिका की नीति के अंतर्गत थे। पत्रकार जगदीश वाघ ('उजो'), लोकसभा-सदस्य अमृत कांसार ('अंकुर'), साहित्यकार मनोहरराय सरदेसाय एवं अना म्हाम्ब्रो ('साळिक', 1960 ई०), वकील सुहास दलाल ('परिमल'), उद्योगपति गुरुनाथ केळेकार और मनोहरराय सरदेशाय ('नवें गोंय', 1962 ई०), पत्रकार यशवन्त पालेकार ('कोंकण भारती', 1968 ई०), पत्रकार चन्द्रकांत केणी ('त्रिवेणी'), स्वतंत्रता-सेनानी एव्हाग्रीयु जॉर्ज ('उजवाड'), साहित्यकार सुरेश काकोडकार ('पुनव', 1973 ई०), प्रकाशक गुरुदास पै ('सोबीत साहित्य'), राजनीतिक विचारक रवीन्द्र केळेकार ('जाग', 1974 ई०), प्रकाशक सुमन्त केळेकार ('जाग प्रकाशन'), शिक्षक प्रकाश थळी ('कुळागर', 1978 ई०), हेमा धुमटकर-नायक ('चित्रंगी', 1980 ई०), समाजसेवी दत्ता नायक ('सौगडी') आदि विभिन्न क्षेत्रों से जुड़े लोगों ने पत्रिकाओं का संपादन किया और आज भी कर रहे हैं।

दैनिक 'राष्ट्रमत' (संपादक–चंद्रकांत केणी, 1963 ई०, देवनागरी लिपि) ने कोंकणी अस्मिता की सदैव रक्षा की। इसके अतिरिक्त 'अपुरबाय' (सं० कोंकणी भाषा मंडल, 1972 ई०), 'कोंकण टाइम्स' (सं० तुकाराम रामा शेट, 1982 ई०, देवनागरी लिपि), 'ऋतु' (सं० पुण्डलीक नारायण नायक, 1983 ई०, देवनागरी लिपि), आदि पत्रिकाओं ने कोंकणी की कविता और कहानी को एक नया आयाम दिया। इसी क्रम में 'वांगडी' (सं० वामन नायक एवं सु० म० तडकोड, देवनागरी लिपि), 'पोटतिडक' सं० अनिल कामत शंखवाळकार, देवनागरी लिपि) 'कोंकणीचें

कुळार' (सं० आनंद नायक, देवनागरी लिपि), 'जैत' (सं० भिकू बोमी नायक, देवनागरी लिपि), 'दैनिक गोंयचो आवाज' (सं० फादर फ्रेंडी जे० दा कॉश्त, 1989, रोमन लिपि), दैनिक 'सुनापरान्त' (सं० चन्द्रकांत केणी, उदय भेम्ब्रे, राजू नायक, संदेश प्रभुदेसाय, 1987 ई०), आदि पत्र-पत्रिकाओं ने कोंकणी समाज को विचारशील बनाया।

बाल-साहित्य

कोंकणी में बाल-साहित्य का लेखन विपुल मात्रा में हुआ है। यहाँ के सामाजिक जीवन में बालक-बालिकाओं का विशेष महत्त्व रहा है। राधा-कृष्ण, नवचण्डी आदि धार्मिक समारोह घर-घर में मनाने की परम्परा यहाँ बहुत पुरानी है जिसमें बालक-बालिकाओं की सहभागिता उल्लेखनीय रही है। गोवा की संस्कृति में नारियों, एवं बालक-बालिकाओं के समृद्ध जीवन के लिए त्याग की भावना सर्वोपरि रही है। गरीब से गरीब माता-पिता भी अपने बच्चों को पाठशाला जरूर भेजते हैं। प्रकृति का सुरम्य वातावरण एवं खानपान की सुविधा ने बच्चों को उन्मुक्त जीवन प्रदान किया है। ऐसे परिवेश में बाल-साहित्य का लेखन सहज स्वाभाविक था। कोंकणी-साहित्य में प्रकृति-प्रेम, पशु-पक्षियों के प्रति उदारता एवं दीन-दुखियों के प्रति करुणा का भाव, खेल-कूद, सामाजिक एवं धार्मिक अवसरों पर सौहार्दपूर्ण व्यवहार आदि बातें दृष्टिगोचर होती हैं। यहाँ के बालक एवं बालिकाएँ स्वभावतः हँसमुख और सदाचारी होती हैं।

बीसवीं सदी के प्रारंभ से कोंकणी-बाल-साहित्य का प्रकाशन शुरू हुआ। इसके पूर्व घर-घर में संत साहित्य, पंचतंत्र, धार्मिक एवं पौराणिक साहित्य के माध्यम से बालक-बालिकाओं को मौखिक कहानियाँ सुनायी जाती थीं। कुछ समय बाद छोटी-छोटी पत्रिकाएँ एवं पाठ्य पुस्तकें बच्चों को उपलब्ध करायी गयीं। सन् 1979 ई० में कोंकणी बालक वर्ष मनाया गया। उस वर्ष बच्चों के व्यक्तित्व के विकास के लिए साहित्य और पत्रिकाओं का प्रकाशन किया गया। इस कार्य में कोंकणी भाषा प्रेमी, साहित्यकार, प्रकाशक तथा अन्य संस्थाएँ जुट गयीं। सरकार से किसी प्रकार का अनुदान नहीं मिला। सन् 1962 ई० में कोंकणी भाषा का पाठ्यक्रम विद्यालयों में अनिवार्य कर दिया गया।

बाल-साहित्य के निर्माण का प्रथम प्रयास बाराँव-द-कुंभारजुवा और तोमाज मोराँव ने किया। उसका आधार लेकर शणै गोंयबाब ने बालकों के लिए 'भुरग्याँलो ईस्ट' (1935 ई०) नाम से बाल साहित्य की रचना की। इन्होंने यूरोपीय बालकहानियों

का अनुवाद 'जादुचो जुम्बो' (1968 ई०) नाम से किया। भाषा-शैली की दृष्टि से इसका विशेष महत्त्व है। आचार्य रामचंद्र शंकर नायक ने 'भुरग्याँलो वेद' (1948 ई०) और काशीनाथ श्रीधर नायक 'बयाभाव' ने 'देखदिण्यो काणयो' (1950 ई०) पत्रिका का सम्पादन किया। रवीन्द्र राजाराम केळेकार की पत्नी गोदुबाय केळेकार ने 'फुलत्यो-कळयो' कहानियाँ तथा अना म्हाम्ब्रो ने 'घुमचे कट्टर घुम' (1964 ई०) चित्रमालिका की रचना की।

रघुनाथ विष्णु पंडित ने 'गोड गोड काणयो' (दो भागों में) 1965 ई० में और 'रामायण-महाभारतातल्यो कथा' 1966 ई० में प्रकाशित की। कमलादेवी राव-देशपाण्डे ने 'काणयाँ-घोस' कहानी-संग्रह और 'चिरमुल्यो' कविता-संग्रह 1983 ई० में प्रकाशित किये। 'चिरमुल्यो' के अतिरिक्त उनके दो अन्य कविता-संग्रह 'गिजबिजलें' (1985 ई०) तथा 'गोंयकाराच्या-पडवेर' भी सामने आये। बाल-साहित्य के अन्य लोकप्रिय लेखक हैं सुरेश काकोडकार ('एलिस आनी ताचो अप्रूप संवसार' 1970 ई०), दामोदर मावजो ('काणी एका खोमसाची', 1970 ई०), पुण्डलीक नारायण नायक ('रानसुन्दरी' 1974 ई०), महाबळेश्वर शेणवी बोरकार ('अशी काणी राजा राणी' 1975 ई० एवं 'सान्तानाची पिल्लूक') लक्ष्मणराव सूर्याराव सरदेसाय ('रामग्याली वागा भोंवडी, 1979 ई०), शान्ताराम हेदो ('बापू' और 'मदलो पूत'-नाटककार भास के 'मध्यमव्यायोग' के कथानक पर आधारित रचना, 1979 ई०), रमेश भगवन्त वेळुस्कार ('भुंक भुंक भिशू', 'चानी मामा', 'फुलपाकुलें' और 'कवनाँ', 1980 ई०), ओलिविन्यु जुजे फ्रांसिस गॉमिश ('सुपुल्लो काणयां पांटुलो', 1975 ई०, 'भारत आमचो देस', 1982 ई० तथा 'डॉ० फ्रांसिस लुईस गॉमिश हांची जीण', 1985 ई०), डॉ० विनायक मयेकार ('आफ्रिकेतलो शिव', 1986 ई०) आदि।

रवीन्द्र राजाराम केळेकार ने 'अशे आशिल्ले गाँधीजी' और 'कथा आनी काणयो' पुस्तकों में बालकों पर अच्छे संस्कार पड़ने हेतु गाँधीजी के जीवन से सम्बन्धित विभिन्न प्रसंगों का उल्लेख किया है। इन्होंने गाँधीजी के जीवन पर विपुल लेखन-कार्य किया है। पे आल्वारु रेनातु मेन्दिस ('सुरश्री केसरबाय केरकर'), पुरुषोत्तम सिंगबाल ('बीरबल'), डॉ० अरुण हेबळेकार ('आर्यभट्ट') आदि बालसाहित्य के लेखकों ने अपनी कृतियों से बालकों को विविध विषयों की जानकारी दी। इनमें से कतिपय लेखकों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है। कृष्णनाथ अळवणी ('आर्मी सगळी देह शाणी'), गुरुदास बाम्बोळकार ('काणी एका फळराजाची'), रामदास नायक ('कावळे'), जयमाला चोडणेकार-दणायत ('सप्तक'-सात नाटिकाएँ), विनय सर्लकार ('बोधिका') आदि रचनाकारों की रचनाएँ भी प्रसिद्ध हैं।

कोंकणी के लेखकों ने इतर भाषाओं के बालसाहित्य का कोंकणी में अनुवाद किया है। चन्द्रकांत केणी ने फ्रेंच कहानी का अनुवाद 'फुलाचो हात' नाम से किया है। कुमुदिनी केळेकार, संजीवनी केळेकार तथा गुरुनाथ केळेकार के परिवार के लोगों ने 'पंचतंत्र', 'महाभारत', 'अरेबियन नाईट्स', काऊण्ट लिओ टॉल्सटॉय, जवाहरलाल नेहरू, एनिड ब्लिटन आदि पर कोंकणी में पच्चीस से अधिक स्वतंत्र रचनाएँ कीं। फेलिसियु कार्दोझ ने 'अल्लाउदिनाचोदिवो', 'ताखटी सिंदबाद', 'अलीबाबा आनी चाळीस चोर' एवं श्याम वेरेंकार ने 'कुण्डेकुस्कूर' (1979 ई०) की रचना की। डॉ० भिकाजी घाणेकार ने बालसाहित्य की कई रचनाएँ कीं जिनमें 'सर्कस, 'पिकनिक' और 'हावेस' पाठकों में काफी लोकप्रिय रहीं। अभय कुमार वेलिंगकार ने बाल-कविता एवं बाल-कहानियाँ धारावाहिक रूप में पत्रिकाओं में प्रकाशित कीं। विजयाबाय सरमळकर ने लोकसाहित्य का आधार लेकर 'गाँठलें' (1980 ई०) की रचना की। डॉ० तानाजी हळर्णकार ने कई नाटिकाएँ लिखीं। स्वामी सुप्रिय ने कहानियों एवं कविताओं के छह संग्रह प्रकाशित किये। विनय सुर्लकर का 'सात मजली हाँसो', दीपा मुरकुण्डे का 'नुपी', 'चिमी', 'हिरन आनी वास्वेल' जैसी कहानियाँ तथा 'पिटकुली नाटकुली' जैसी नाटिकाएँ बालकों को अच्छी लगीं। नयना आडारकार ने 'रानांतल्योकाणयो' और 'पिटुकल्यो काणयो', सुधा खरंगटे ने 'शिव आनी कासव' तथा रजनी भेम्ब्रे ने 'मोराची करामात' जैसी पुस्तकें लिखीं।

मनोहरराय लक्ष्मणराव सरदेसाय ने भी बालसाहित्य के अंतर्गत कविता, कहानी, एकांकी, नाटिका, बडबडगीत जैसी विधाओं में लेखनी चलायी। उनकी रचनाओं में 'बेब्यांचें काजार' (1965 ई०), 'भांगराची कुराड', 'माणकुलींगितां' (1982 ई०), 'मनोहर गितां' (1987 ई०), 'केलें तुकां जालें म्हाकां', 'राजकुँवर आनी चार चोर', 'अकलेचो कान्दो', 'झाँसीची राणी', 'बिराड बदलल्लें' (1981 ई०) प्रमुख हैं।

कोंकणी-पत्रिकाओं ने बालसाहित्य के प्रकाशन में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। इनमें 'अपुरबाय' (संपादक-शांताराम वर्दे वालावलिकार), 'सोबित साहित्य', (कोंकणी भाषा मंडल), 'नवें गोंय', 'मारुती' (सं० गुरुनाथ केळेकार), 'गोंयचो पर्जळ' (सं० जुवांव इनासियु-द-सौझा), 'भुरग्याँलो राजहंस' (सं० रमेश वेळुस्कार), 'बिम्ब' (सं० दिलीप बोरकार) आदि पत्रिकाएँ प्रमुख हैं।

निष्कर्ष-स्वरूप यह कहा जा सकता है कि कोंकणी का साहित्य-भांडार समृद्ध है जो दिनानुदिन संवर्धित हो रहा है।

□□□